पारस परस

वर्ष-9 अंक-1 जनवरी-मार्च, 2019, रजि. नं.:यू.पी. एच.आई.एन./2011/39939 पृष्ठ -40 मूल्य- 25

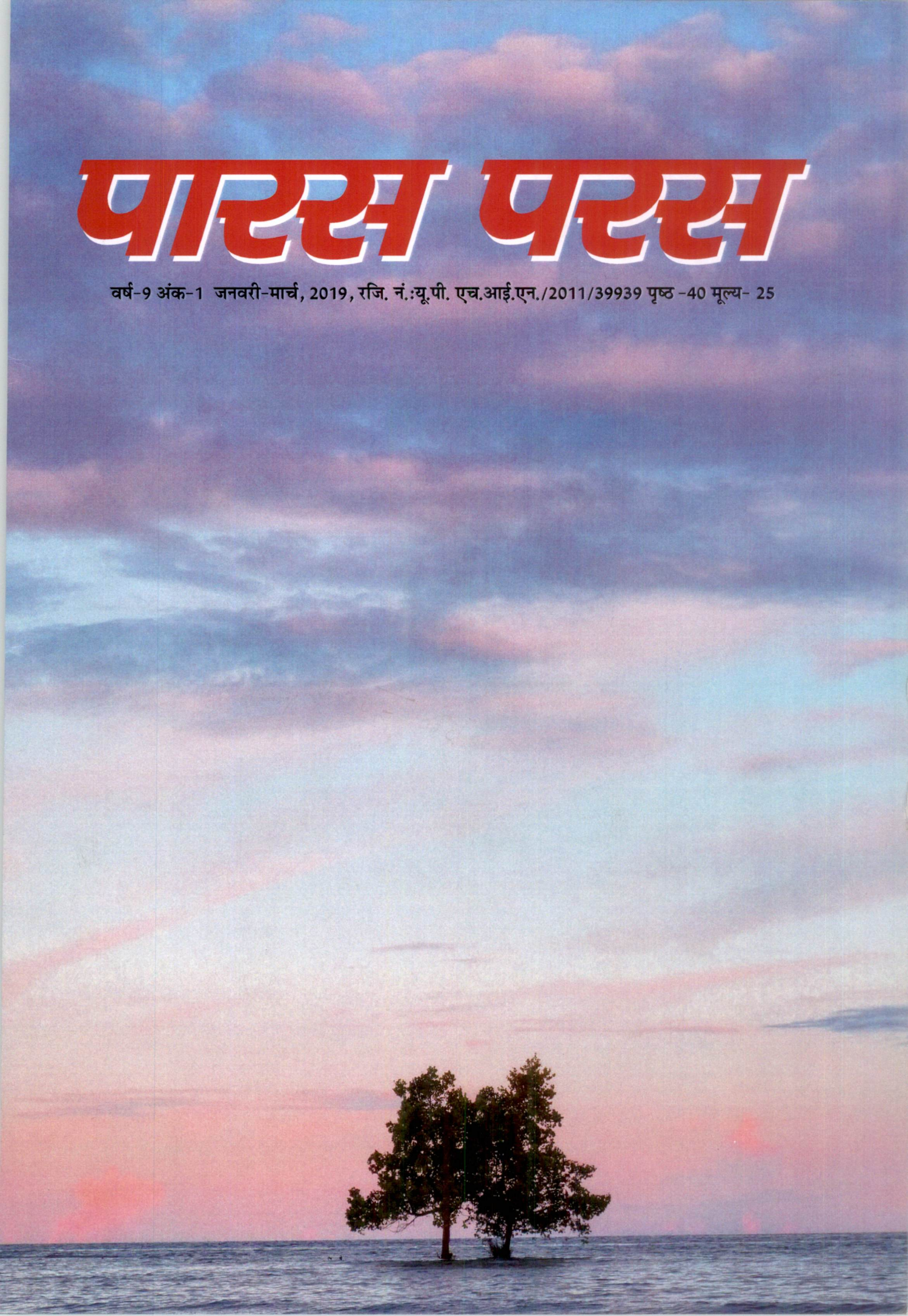

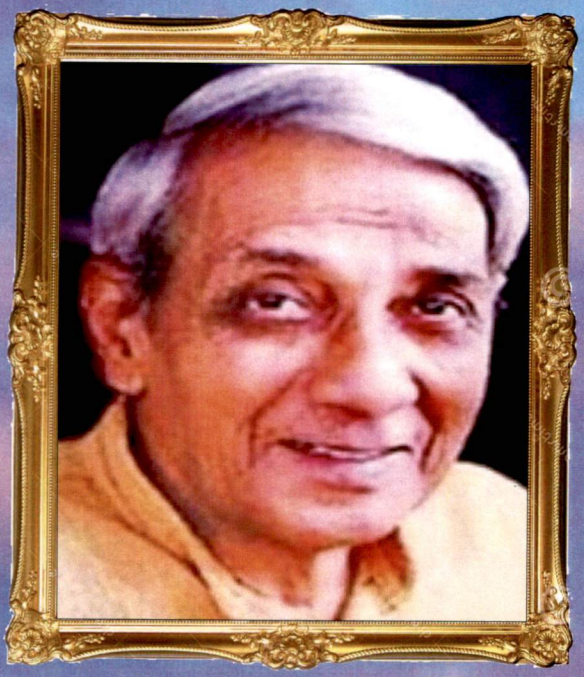

परमानन्द श्रीवास्तव

जन्म- 10 फरवरी 1935 - निधन- 5 नवम्बर 2013

एक दिन ऐसे ही गिरूँगा टूटकर,
महावृक्ष के पत्ते–सा।
कुछ पता नहीं चलेगा,
निचाट सुनसान में।
चीख़ फट पड़ेगी बाहर,
झूल जाऊँगा रिक्शे से।
लिटा दिया जाएगा ख़ुरदुरी जमीन पर,
क्या यह अन्त से पहले का हादसा है।
गनीमत कि बेटी साथ थी,
उसके जानने वाले थे,
बिसलरी का पानी था देर से सही–
समय बताता नहीं कि दिन पूरे हो रहे हैं।
चींटी तो जानती है अपना गन्तव्य,
न हम चुप रह पाते हैं,
न बोल पाते हैं।

वर्ष : 9 अंक : 1 जनवरी-मार्च, 2019 रजि. नं. : यूपी एचआईएन/2011/39939

पारस परस

हिन्दी काव्य की विविध विधाओं
की त्रैमासिक पत्रिका

संरक्षक मंडल
डॉ. एल.पी. पाण्डेय

प्रधान संपादक
प्रो. सूर्यप्रसाद दीक्षित

संपादक
डॉ. अनिल कुमार

कार्यकारी संपादक
सुशील कुमार अवस्थी

संपादकीय कार्यालय
538 क/1324, शिवलोक
त्रिवेणी नगर तृतीय, लखनऊ
मो. 9935930783
Email: paarasparas.lucknow@gmail.com

लेआउट एवं टाइप सेटिंग
मेट्रो प्रिंटर्स
लखनऊ

स्वामी प्रकाशक मुद्रक एवं संपादक डॉ. अनिल कुमार द्वारा प्रकाश पैकेजर्स, 257, गोलागंज, लखनऊ उ.प्र. से मुद्रित तथा ए-1/15 रश्मि, खण्ड, शारदा नगर योजना, लखनऊ उ.प्र. से प्रकाशित।
सम्पादकः डॉ. अनिल कुमार

पारस परस में प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचार संबंधित रचनाकारों के हैं। संपादक अथवा प्रकाशक का रचनाओं में व्यक्त विचारों से सहमत होना आवश्यक नहीं है। पत्रिका से संबंधित सभी विवाद लखनऊ न्यायालय के अधीन होंगे। उपरोक्त सभी पद मानद एवं अवैतनिक हैं।

अनुक्रमणिका

संपादकीय		2
श्रद्धा सुमन		
सबसे न्यारे बाबूजी	डॉ. अनिल कुमार	4
पुण्य स्मरण		5
कालजयी		
विवशता	पारस नाथ पाठक 'प्रसून'	6
धीरे-धीरे	परमानंद श्रीवास्तव	7
बूँद टपकी एक नभ से	भवानी प्रसाद मिश्र	8
कदम-कदम बढाये जा	वंशीधर शुक्ल	9
समय के सारथी		
सम्बन्धो के मोहक मुख पर	मधुकर अष्ठाना	10
काँटों में खिला	राजेन्द्र वर्मा	11
यह शतरूपा प्रकृति	नरेन्द्र मिश्र	12
आलोक-सुमन	बैजनाथ गुप्ता ब्रजेन्द्र	13
बोल नहीं पाते है	नरेश कात्यायन	14
चिन्तन-मनन	तुकाराम वर्मा	15
कलरव		
पत्ते झरने लगे	माहेश्वर तिवारी	16
नाचो-गाओ	रवीन्द्र 'शलभ'	17
हम बच्चे हैं	चिरंजीत	18
आई चिड़िया आले आई	बंधुरत्न	19
नारी स्वर		
भयभीत जननी	उषा सिसोदिया	20
गुनगुनाइये	पुष्पा सुमन	21
सपने सँवर गये	डॉ. ऋचा सत्यार्थी	22
अम्बर सजाये हैं	डॉ. मृदुला शुक्ला मृदु	23
उद्वेलन	विद्या तिवारी	24
पूर्ण पुरूष	इन्द्रिरा मोहन	25
मत बनाओ...गांव को अपना निशान	डॉ. नलिनी पुरोहित	26
रश्मि-पत्रों पर	निर्मला जोशी	27
उद्बोधन		
जय जवान, जय किसान	डॉ. गणेश दत्त सारस्वत	28
शहीदों की याद में	धनंजय अवस्थी	29
नवोदित रचनाकार		
असर देखता हूँ	प. प्रवीण त्रिपाठी	30
श्रीशंकर	महेश प्रसाद पाण्डेय	31
अजात सम्बोधन	निर्मल शुक्ल	32
शहीदों के नाम	अशोक कुमार पाण्डेय 'अनहद'	33
गीत में किसको सुनाऊँ	वीरपाल सिंह निश्छल	34
त्रासदी	अखिलेश निगम	35
दिल	हीरा लाल	36
आज का दिन	महेश आलोक	37
ज्योति-शिखा	अवधेन्द्र प्रताप सिंह	38
भर हृदय में प्यार पावन मानव को हँसाओ	विष्णु कुमार शर्मा	39
यूँ सारा जीवन बीत गया	जिओ लाल जैन	40

कर्त्तव्य पालन की उपेक्षा कर के अधिकार की माँग अनुचित है

भारत वर्ष एक संप्रभु, पंथ निरपेक्ष तथा लोकतांत्रिक समाजवादी गणराज्य के रूप में लोक–प्रतिष्ठित राष्ट्र है। 26 जनवरी, 1950 को यह राष्ट्र, गणतंत्र के रूप में सीापित हुआ। इस तिथि का महत्वपूर्ण इतिहास है। 31 दिसम्बर, 1929 को अर्धरात्रि में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के लाहौर सत्र में आगामी 26 जनवरी, 1930 को पूर्ण स्वराज दिवस मनाने का निर्णय लिया गया। भारत को पूर्ण स्वराज दिलाने के लिये अनेक महाविभूतियों के नेतृत्व में विभिन्न प्रकार के आंदोलन चलाये गये और असंख्य स्वतंत्रता प्रेमी देशवासियों ने अपने प्राणों की आहुति देने के साथ ही अपना सर्वस्व न्यौछावर कर दिया। इन सब के अमूल्य त्याग व बलिदान के फलस्वरूप ही 15 अगस्त, 1947 को अपना देश ब्रिटिश उपनिवेश से स्वतंत्र हो सका। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भी 26 जनवरी की तिथि, देश के अग्रणी नेताओं के साथ ही आमजन–मानस के बीच एक महत्वपूर्ण तिथि के रूप में बनी रही। इसी भावना के दृष्टिगत भरतीय संविधान 26 जनवरी, 1949 को आधिकारिक रूप से तो अपना लिया गया किन्तु यह पूर्ण रूप से 26 जनवरी, 1950 को लागू हुआ और इसके माध्यम से भारतीय नागरिकों को सरकार चुनने तथा स्वशासन का अधिकार प्राप्त हुआ। इस तिथि को ही भारत के प्रथम राष्ट्रपति द्वारा अपनी शपथ ली गयी। शपथ–ग्रहण के बाद भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद द्वारा अपने सम्बोधन में देश के नागरिकों से कहा गया कि–

''हमें स्वयं को आज के दिन एक शांतिपूर्ण किंतु एक ऐसे सपने को साकार करने के प्रतिपुनः समर्पित करना चाहिए, जिसने हमारे राष्ट्रपिता और स्वतंत्रता संग्राम के अनेक नेताओं और सैनिकों को अपने देश में एक वर्गहीन, सहकारी, मुक्त और प्रसन्नचित्त समाज की स्थापना के सपने को साकार करने की प्रेरणा दी। हमें याद रखना चाहिए कि आज का दिन आनन्द मनाने की तुलना में समर्पण का दिन है, श्रमिकों और कामगारों, परिश्रमियों और विचारकों को पूरी तरह से स्वतंत्र, प्रसन्न और सांस्कृतिक बनाने के भव्य कार्य के प्रति समर्पण करने का दिन है।''

भारतीय संविधान के पूर्णत या लागू होने के बाद भारत के तत्कालीन गवर्नर जनरल श्री सी0 राज गोपालाचारी जी ने आकाश वाणी से एक वार्ता में कहा कि–

''अपने कार्यालय में जाने की संध्या परगणतंत्र के उद्घाटन के साथ मैं भारत के पुरूषों और महिलाओं को अपनी शुभकामनाएं और बधाई देता हूँ जो अब से एक गणतंत्र के नागरिक हैं।'' तात्पर्य यह है कि 26 जनवरी, 1950 को भारत के सभी नागरिक भारतीय गणतंत्र के नागरिक हो गये।

भारतीय संविधान, भारतीय गणतंत्र कादर्पण है। विभिन्न क्षेत्रों के दीर्घ अनुभव व ज्ञान को धारण करने वाले स्वनामधन्य विभूतियों की लम्बी अवधि के विमर्श के फलस्वरूप

भारतीय संविधान की रचना हुई और विभिन्न सामाजिक एवं वैश्विक आवश्यकताओं के दृष्टिगत यथावश्यक संशोधन भी हुये जिससे यह हमारे पूर्वजों एवं नागरिकों की आकांक्षाओं की पूर्ति करता रहे। हमारे संविधान में जहाँ हमें विभिन्न प्रकार के मौलिक अधिकार प्रदान किये गये हैं, वहीं हम से विभिन्न प्रकार के कर्त्तव्यों के पालन की भी अपेक्षा की गयी है। भारतीय संविधान की मूलभावना के अनुरूप हमें अपने अधिकारों के साथ ही कर्त्तव्य बोध का ध्यान रखना होगा, तभी राष्ट्र की समग्र उन्नति हो सकेगी। अधिकार और कर्त्तव्य एक–दूसरे के पूरक हैं, क्योंकि जहाँ किसी का अधिकार दूसरे के लिये कर्त्तव्य है, वहीं किसी का कर्त्तव्य दूसरे के लिये अधिकार है, किन्तु जब हम अधिकार और कर्त्तव्य को पूरक न मानते हुये एक–दूसरे का विरोधी समझते हैं तो उस समय अनेक अन्तर्विरोध उत्पन्न होते हैं और सामाजिक सौमनस्य प्रभावित होता है।

शुभकामनाओं के साथ,

डा0 अनिल कुमार

सबसे न्यारे बाबूजी

डॉ. अनिल कुमार पाठक

जीवन की ऊषा बेला में,
हुई नियति अभिशप्त।
दुःख–पीड़ा संघर्षों से,
हो कष्टों से परितप्त।
अदृश कृपा पा मातु–पिता की,
पथ पर ज्यों ऋषिसप्त।
विकट डगर पर कभी रुके ना,
मेरे प्यारे बाबूजी।
सबसे न्यारे बाबूजी।।

जीवन पथ अनजाना जिसमें,
संग कोई ना साथी।
एकाकी, पदगामी संग में
कोई अश्व न हाथी।
चहुँ दिशि फैल रहा अँधियारा,
ना दीया ना बाती।
निशा–काल पर कभी डरे ना,
मेरे प्यारे बाबूजी।
सबसे न्यारे बाबूजी।

अरि संग मीत घात से आहत,
लथ–पथ और विदीर्ण।
पग–पग पर दी कठिन परीक्षा,
किन्तु हुए उत्तीर्ण।
दिग्दर्शक, प्रेरक बन सबके,
रवि सम हो अवतीर्ण।
सत्य–मार्ग से कभी हटे ना,
मेरे प्यारे बाबूजी।
सबसे न्यारे बाबूजी।।

कोशिश होती रही सदा,
विचलित पथ से हो जायें।
त्याग कँटीले बिस्तर को,
मखमल की सेज सजायें।
साथ छोड़ दें सच का, वे,
मिथ्या–भाषी बन जायें।
साम–दाम से कभी झुके ना,
मेरे प्यारे बाबूजी।
सबसे न्यारे बाबूजी।।

❖❖❖

पं. पारस नाथ पाठक 'प्रसून'

जन्म– 17 जुलाई 1932
निधन– 23 जनवरी 2008

तुम अनादि हो, तुम अनन्त हो, दिग्दर्शक, प्रेरक, अरिहन्त।
अजर, अमर, हे प्राणतत्व! तुम, कण-कण में व्यापी बसन्त।।

शिक्षाविद् व हिन्दी कविता के सशक्त हस्ताक्षर **स्व0 पारस नाथ पाठक 'प्रसून'** का जन्म उत्तर प्रदेश के जनपद–जौनपुर के गोपालपुर ग्राम में गुरुपूर्णिमा को हुआ था। प्रारम्भिक शिक्षा स्थानीय विद्यालयों से प्राप्त करने के पश्चात उन्होंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय, काशी विद्यापीठ, गोरखपुर विश्वविद्यालय तथा हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग से विभिन्न उपाधियाँ प्राप्त कीं। वे सर्वोदय विद्यापीठ इण्टर कालेज, मीरगंज, जौनपुर में हिन्दी विषय के प्रवक्ता पद पर कार्यरत रहे।

स्व. **'प्रसून'** की पावन स्मृति को अक्षुण्ण रखने के लिए **'पारस परस'** नाम से काव्य–त्रैमासिकी प्रकाशित करने का संकल्प लिया गया जो निर्बाध गति से चल रहा है।

स्वर्गीय 'प्रसून' जी की पुण्यतिथि पर विनम्र श्रद्धांजलि

❖❖❖

विवशता

पं0 पारसनाथ पाठक 'प्रसून'

मैं हृदय में प्यार लेकर मर गया, उस रात को, जब।

तुम न आई पास लतिके, नयन से आँसू न ढुलके,
जो हृदय मेरा बना था, रो न पाया, हाय– खुलके।
याद मुझको है, अभी भी, भरता न कोई आह था, तब,
मैं हृदय में प्यार लेकर मर गया, उस रात को जब।

चाँदनी सी रात उज्ज्वल, भर रही थी, एक हलचल,
हँस रहे, मुझ पर सितारे, तू खड़ी थी, दूर निश्चल।
हाय– जीवन जा रहा था, छोड़ कर, संसार को, जब,
मैं हृदय में प्यार लेकर मर गया, उस रात को जब।

तू विवश थी जानता हूँ, मजबूरियाँ पहचानता हूँ,
हाथ में निज हाथ रखकर बँध चुकी हो, मानता हूँ।
पर तोड़ कर बन्धन प्रिये तुम, आई नहीं हो पास कब?
मैं हृदय में प्यार लेकर मर गया, उस रात को जब।

❖❖❖

धीरे-धीरे

परमानंद श्रीवास्तव

धीरे–धीरे डूबता है, दिन,
धीरे–धीरे आती है, रात,
धीरे–धीरे चढ़ता है, बुखार,
जैसे प्यार का ज्वार।

धीरे, धीरे आती है, मृत्यु,
धीरे, धीरे रुकती है, ट्रेन,
बेगूसराय स्टेशन पर।

धीरे, धीरे आता है, डाकिया,
देता है, ख़त सन्देश।
धीरे,धीरे आदमी अकेला होता है,
उम्र के अन्तिम पड़ाव पर।
जब घन्टी बजती है, फोन की,
पर नहीं सुनाई देती।
आते हैं, एस०एम०एस०,
पर वह पढ़ नहीं पाता।
न जाँच पाता है, मिस्ड कॉल,
मित्रों के।

धीरे, धीरे उठता है, बाजार,
टोकरियाँ माथे पर लिये,
स्त्रियाँ टटोलती हैं, अपनी थकी–
देह का आलस्य।
गिनती हैं, पैसे,
छोड़ती हैं, उम्मीद–
अकाल–कथा की।

बीतेगा समय,
धीरे–धीरे।
जैसे सदियाँ बीतती हैं,
हाथ बँधी घड़ी में।

❖❖❖

बूँद टपकी एक नभ से

भवानीप्रसाद मिश्र

बूँद टपकी एक नभ से,
किसी ने झुक कर झरोखे से–
कि जैसे हँस दिया हो।
हँस रही–सी आँख ने जैसे–
किसी को कस दिया हो।
ठगा–सा कोई किसी की–
आँख देखे रह गया हो।
उस बहुत से रूप को,
रोमांच रो के सह गया हो।

बूँद टपकी एक नभ से–
और जैसे पथिक छू,
मुस्कान चौंके और घूमे।
आँख उसकी जिस तरह,
हँसती हुई–सी आँख चूमे।
उस तरह मैंने उठाई आँख,
बादल फट गया था।
चंद्र पर आता हुआ–सा,
अभ्र थोड़ा हट गया था।

बूँद टपकी एक नभ से,
ये कि जैसे आँख मिलते ही
झरोखा बंद हो ले।
और नूपुर ध्वनि झमक कर,
जिस तरह द्रुत छंद हो ले।
उस तरह
बादल सिमट कर,
और पानी के हजारों बूँद–
तब आयें अचानक।

❖❖❖

कदम कदम बढ़ाये जा

वंशीधर शुक्ल

कदम क़दम बढ़ाये जा,
ख़ुशी के गीत गाये जा।
ये जिन्दगी है, क़ौम की,
तू क़ौम पर लुटाये जा ।
उड़ी तमिस्र रात है, जगा नया प्रभात है,
चली नई जमात है, मानो कोई बरात है।

समय है, मुस्कराये जा,
ख़ुशी के गीत गाये जा।
ये जिन्दगी है, क़ौम की,
तू क़ौम पर लुटाये जा ।
जो आ पड़े कोई विपत्ति मार के भगायेगे,
जो आये मौत सामने तो दाँत तोड़ लायेगें।

बहार की बहार में,
बहार ही लुटाये जा ।
क़दम–क़दम बढाये जा,
ख़ुशी के गीत गाये जा।
ये जिन्दगी है, क़ौम की,
तू क़ौम पर लुटाये जा ।
जहाँ तलक न लक्ष्य पूर्ण हो समर करेंगे हम,
खड़ा हो शत्रु सामने तो शीश पै चढ़ेंगे हम।

विजय हमारे हाथ है,
क़दम–क़दम बढाये जा,
ख़ुशी के गीत गाये जा।
क़दम बढ़े तो बढ़ चले, आकाश तक चढ़ेंगे हम,
लड़े हैं, लड़ रहे हैं तो जहान से लड़ेंगे हम।

बड़ी लड़ाइयाँ हैं, तो–
बड़ा क़दम बढ़ाये जा,
ख़ुशी के गीत गाये जा।
निगाह चौमुखी रहे, विचार लक्ष्य पर रहे,
जिधर से शत्रु आ रहा उसी तरफ नजर रहे।
स्वतंत्रता का युद्ध है,
स्वतंत्र होके गाये जा,
क़दम–क़दम बढाये जा,
ख़ुशी के गीत गाये जा।
ये जिन्दगी है, क़ौम की,
तू क़ौम पर लुटाये जा ।

❖❖❖

सम्बन्धों के मोहक मुख पर

मधुकर अष्ठाना

सम्बन्धों के मोहक मुख पर
डाल दिया तेजाब,
रिश्तों में जुड़ना भी
अब तो लगने लगा अजाब।

ओर–छोर से परे
जिन्दगी जलती भूलभुलैया,
कठपुतलियाँ अनेक
एक है अँधा नाच–नचैया।
बना गया है, समय,
दरिन्दों को बेमुल्क नवाब।

उठते ही अखबार
सभ्यता पर अलकतरा पोते,
हवा उमेठे कान,
संस्कृति गुजरी रोते–रोते।
उठे सवाल ढूँढ़ने निकले
अपने आप जवाब।

लाठी और भैंस की युति में
खोई रामरती,
रम्भा और मेनका
युग की पूजित महासती।
बदली परिभाषा
अब नये धर्म पर
चढ़ा रुआब

❖❖❖

काँटों में खिला

राजेन्द्र वर्मा

मुद्दतों से चल रहा यह सिलसिला,
शिव को पीने को हमेशा विष मिला।

तब से मैं भी जिन्दगी जीने लगा,
जब से देखा, फूल काँटों में खिला।

है तो नन्हीं–सी, मगर कन्दील है,
ध्वस्त कर देती अँधेरे का किला।

भोर–दुपहर–साँझ तो होती रही,
सूर्य को विश्राम आखिर कब मिला?

जिसमें है जीवन, वही गतिशील है,
इसलिए ही घूमती रहती इला।

टुकड़े–टुकड़े हो गया, सच बोलकर,
आइने को है नहीं फिर भी गिला।

❖❖❖

यह शतरूपा प्रकृति

नरेन्द्र मिश्र

यह शतरूपा प्रकृति हमारी,
माँ है, करो प्रणाम।

प्राण वायु, बल, ओज सूर्य है,
जीवन जल, तन बन माली है।
इसका आदर धर्म हमारा,
यह हर चेहरे की लाली है।

ज्योति कलश यह वसुन्धरा की,
सफल सुखों की धाम।

सुख का झरना, सृजन समुन्दर,
कल्याणी है, मंगल गागर।
इसके पहरेदार हमीं हैं,
निर्मल रखना उजली चादर।

कर्मशील नित, सबल–
निरन्तर, हमको दे आराम।

झूमें वृक्ष, फसल लहराये,
लहरें नदी, विहग सब गायें।
किसी सरस संगीत सभा सा
मोहक वातावरण बनायें।

सुन्दर पर्यावरण दिखायें
नये–नये आयाम।

❖❖❖

आलोक-सुमन

बैजनाथ गुप्ता 'ब्रजेन्द्र'

यह आलोक सुमन से तारे।
टके हुए नीले अम्बर में
मानव का मन हर लेते हैं,
निर्निमेष नयनों से, कवि में
नये भाव भर–भर देते हैं।
यह अभिसारवती के साक्षी यह विरही के रात्रि–सहारे।
यह आलोक सुमन से तारे।
यह लघु नीड़ गगन के तल में
जिनमें शिशु किरणें पलती हैं,
उझक, उझक कर, तनिक–तनिक सा
आस–पास का तम छलती हैं।
नन्हें–नन्हें गात स्वयं में एक अलौकिक आभा धारे।
यह आलोक सुमन से तारे।
यह रजनी के बाल किलकते
गगनांगण में दीख रहे हैं,
कुल की कला 'चमकना' निशि के
असितांचल में सीख रहे हैं।
यह गृह–दीप, ज्योति के अंकुर माँ के प्राण, पिता के प्यारे।
यह आलोक सुमन से तारे।
यह लघु–लघु कृष्णायुध, काले–
अन्धकार के अलंकार हैं,
यह अपनी सम्मिलित शक्ति से
नभगंगा के शिल्पकार हैं।
जी करता एकान्त भाव से इनको यों ही रहूँ निहारे।
यह आलोक सुमन से तारे।

❖❖❖

बोल नहीं पाते हैं

नरेश कात्यायन

बैठ गये भूमि में उठाये गोद में जटायु,
बाँध के भुजाओं में व्यथा को सहला दिया।
दोनों नैन निर्झर, 'नरेश' हो गये हैं आज,
आँसुओं से 'गीध' को प्रभू ने नहला दिया।
कोप का पहाड़ अभी देख रहा था जो भक्त,
करुणा का, उसको समुद्र दिखला दिया।
काल भी जहाँ पर दृष्टि डालने में असमर्थ,
अपनी कृपा का वह अटल किला दिया।

बार–बार भेंटते हैं, बार–बार चूमते हैं,
बार–बार देखते हैं, घाव सहलाते हैं।
बार–बार मस्तक जटायु का उठाके, प्रभु,
घन हुए लोचनों से आकुल लगाते हैं।
पीड़ा अपनी समस्त भूल गये, गृद्धराज,
राम की अपार करुणा में उतराते हैं।
आज जाने क्या–क्या मन दे रहा है, भक्त को,
जो नैन बोलते हैं बैन बोल नहीं पाते हैं।

विश्व की न कोई शक्ति सामने ठहर पाये,
मेरे मित्र, मुझसे वह शक्ति आज माँग ले।
मेरे प्रति तेरा अनुराग है, अवर्णनीय,
प्यारे खग! मेरी अनुरक्ति आज माँग ले।
मूक क्यों हुआ, मुझसा? विलोक मेरी ओर,
प्रीति की प्रखर अभिव्यक्ति आज माँग ले।
प्राण भी निछावर करेगा, राम तुझ पर,
कुछ भी तो माँग मेरी भक्ति आज माँग ले।।

आपके करों का शुभ तीर्थ प्राण त्यागने को,
और क्या अधिक अनुरक्ति चाहिए, मुझे।
कर सकूँ आपका सदैव गुण–गान, बस,
प्रीति की सहज अभिव्यक्ति चाहिए, मुझे।
दूर कर पाये नहीं कोई चरणाम्बुजों से,
आपके, दया निधान शक्ति चाहिए, मुझे।
चाहिए, न जन्म–सुख वैभव 'नरेश' मोक्ष,
पावन पगों में पगी भक्ति चाहिए, मुझे।

❖❖❖

चिन्तन-मनन

तुकाराम वर्मा

दुख–शोक विनाशक जो न सखे!
उसको मन मीत नहीं कहता हूँ।
स्वयमेव गहे सच जो न उसे,
अधिमुक्त अधीत नहीं कहता हूँ।।
जिस गीति को नीति से प्रीति नहीं,
उसको जनगीत नहीं कहता हूँ।
छल–छन्द–भरी विधि से विजयी,
जन को जगजीत नहीं कहता हूँ।।

समता, सहकार, समर्पणता,
सहजीवन के परिचायक हैं।
उपकार, दया, तप, त्याग, क्षमा,
करुणा, व्रत प्रेम प्रदायक है।।
गुण, ओज विभूषण मानव के,
परिवर्धन हेतु सहायक हैं।
बल, शौर्य न शील के रक्षक हों,
तब निश्चय से खलनायक हैं।

ज्ञान प्रधान रहा जग में,
उपकार प्रदायक भक्ति रही है।
शौर्य सहायक मानव का,
पर सर्व समर्थ न शक्ति रही है।
मानव से बहुधा उसकी,
शुचि सम्यक तो अभिव्यक्ति रही है।
और सभी गुण गौण सखे!
सिरकान्ति सदा अनुरक्ति रही है।

❖❖❖

पत्ते झरने लगे

माहेश्वर तिवारी

पत्ते झरने लगे डाल से।
एक, एक कर–
दाँत गिर रहे जैसे–
बूढ़ी दादी के।
बर्फ पड़े तो लगते
जैसे, बिखरे
टुकड़े चाँदी के!

धीरे चलने वाला सूरज
राह नापता तेज चाल से।

दिन छिलके उतारकर, लगते–
रक्खे उबले आलू से,
रातें लगतीं, जैसे हों–
निकलीं नदियों के बालू से।

मौसम से डर लगता
जैसे, इम्तहान वाले सवाल से।

❖❖❖

नाचो-गाओ

रवीन्द्र 'शलभ'

ठुमक–ठुमककर, ता–ता थैया,
रुन–झुन–रुन झुन नाचो भैया।
जैसे नाचें कुँवर कन्हैया।

लहर–लहर लहराओ लट्टू,
बने रहो मत अड़ियल टट्टू।
मधुर प्रेरणा तुम फूलों की,
करो न कुछ चिंता शूलों की।
धरती झूमे, अंबर झूमे,
भाल तुम्हारा दिनकर चूमे।

कुदक–कुदक कर चलम चलैया,
ऐसे चहको चमको भैया।
जैसे हँसमुख सोन चिरैया।

कहा किसी ने वचन पुराना,
जरा इधर भी कान लगाना।
यह दुनिया दो दिन का मेला,
दुर्गम पथ पर ठेलम ठेला।
बुरी बात मत शोर मचाओ।

हो–हो हैया, हो–हो हैया,
मिल–जुल जोर लगाओ भैया।
पार लगे जग भर की नैया।

❖❖❖

हम बच्चे हैं

चिरंजीत

हम बच्चे हैं छोटे–छोटे, काम हमारे बड़े–बड़े।
आसमान का चाँद हमीं ने–
थाली बीच उतारा है,
आसमान का सतरंगा–
वह बाँका धनुष हमारा है।
आसमान के तारों में वे तीर हमारे गड़े, गड़े।

भरत रूप में हमने ही–
तो दाँत गिने थे शेरों के,
और राम बन दाँत किए थे–
खट्टे असुर लुटेरों के।
कृष्ण कन्हैया बनकर हमने नाग नथा था खड़े, खड़े।

बापू ने जब बिगुल बजाया
देश जगा हम भी जागे,
आजादी के महासमर में,
हम सब थे आगे–आगे।
इस झंडे के खातिर कष्ट सहे थे बड़े–बड़े।

❖❖❖

आई चिड़िया, आले आई

बंधुरत्न

आई चिड़िया आले आई,
आई चिड़िया बाले आई।
चूँ–चूँ करती चिड़िया आई,
दाब चोंच में दाना लाई।

दाना आया, पानी आया,
माटी ने मिल बीज उगाया।
धरती में जड़ लगी फैलने,
ऊपर फैल गई बिरवाई।

चिड़िया कहती दाना मेरा,
मुन्ना कहता ना–ना मेरा।
बादल कहता सींचा मैंने,
तीनों में हो गई लड़ाई।

पौधा बोला, तुम सब आओ,
मिल–जुलकर मुझको अपनाओ।
सबसे पहले धरती माँ है,
जिसमे मेरी जड़ें जमाईं।

❖❖❖

भयभीत जननी

उषा सिसोदिया

आज कहाँ देखूँ, माँ में ममता, करुणा,
उसमें तो व्याप्त हो गया है भय, केवल भय,
विगत का भोगा भय, अपनों का भय, आगत का भय।
माँ आज डूब चुकी है अपने भयों में,
स्मृति में है उसकी,
बचपन में माता–पिता के अनुशासन से घेरा भय,
यौवन में पति की खींची लक्ष्मण रेखा का भय।
और जीवन के संध्याकाल में
उसकी कोख से पल्लवित,
उसका पुत्र, एक पूर्ण पुरुष,
भयाक्राँत कर देता है उसे अपने कठोर कटु वचनों से,
अपने सशक्त शरीर के दम्भ से।
अपने में ही सिमटी हुई भयभीत माँ,
डर से सहमी चुप बैठी रहती है।
हो भयभीत एक आशंका से,
कहीं उसका बेटा न जाने कब,
उसके सर से घर की
यह छाया उघाड़ दे।
और अपनी इस माँ को
उसके अपने ही घर से निकाल दे।

❖❖❖

गुनगुनाइये

पुष्पा सुमन

आया है नया साल तो खुशियाँ मनाइये,
मुमकिन हो अगर दर्द सभी भूल जाइये।

काँटों में गुजर करने का अन्दाज सीखिए,
गुलशन में गुलाबों की तरह खिलखिलाइये।

बन्दूक से खतरा न बारूद से खतरा है।
नफरत ही खतरनाक है, इसे ही मिटाइये।

आजादी तुल के आयी शहीदों के लहू से,
कौड़ी के मोल जा रही, इसको बचाइये।

हैं, बन्द किताबों में सभ्यता के फलसफे,
इंसानियत के गाँव में इसको पढ़ाइये।

हमने तो अपनी दास्तां कह दी है साफ–साफ,
अब आप भी तो अपनी कहानी सुनाइये।

'पुष्पा' के गीत और गजल आपके लिए,
अब आप भी फुरसत में इन्हें गुनगुनाइये।

❖❖❖

सपने सँवर गये

डॉ. ऋचा सत्यार्थी

पहचानी–सी गंध हवा के साथ चली आई,
आँखों में सपने–भरी रात चली आई।
महक उठा शाम का रंग
क्षितिज पर–
इन्द्रधनुष उतर आए
गीत कई मुसकराए
मन के शहर यादों की बारात चली आई।
रात के आँचल में हँसकर–
उजाले बिखर गए,
सपने सँवर गए।
तुम हँसे तो सहर की बात चली आई।
कुछ कहा चुपके हवा ने
फिजायें महक गई
यादें बहक गईं
मौसम में खुशबू की सौगात चली आई।
पिया गए परदेस
पनघट पर–
प्यासी रह गई पनिहारिन,
निंदिया भई बैरिन,
अँखियों में बे–मौसम बरसात चली आई।
पहचानी–सी गंध हवा के साथ चली आई।

❖❖❖

अम्बर सजाये हैं

डॉ. मृदुला शुक्ला 'मृदु'

वसन्त–बहार छाई दिशि–दिशि लागे जनु,
सुरभि–बयारिन कै अम्बर सजाये हैं।
बन–बाग–उपवन–गेंदा औ गुलाब सोहे,
ग्राम–तटिनी के तट सूर्यमुखी भाये हैं।
सरसों औ पाटल कै गंध मदहोश करें,
तरुवर बौराये तन–मन बौराये हैं।
क्यारिन में, कुंजन में, पुष्पन की पाँखिन पै,
अलिवृन्द झूमि–झूमि–झूमि मँडराये हैं।

मधुपान करि मतवारे भये कारे–कारे,
शततन्त्री वाद्य झन–झन झनकाये हैं।
देह–गेह–सुधि बिसराइ गई मृदु मति,
तन और अतन दोऊ भंग को चढ़ाये हैं।
पुष्प–बान छाँड़ि पाछे मन में उपजि गयो,
योगी–यती–सिद्ध केर जिया भरमाये हैं।
प्रिय ऋतुराज को ही कोकिल बखान करै,
सुधी सारदा के पद चित्त सों लगाये हैं।

❖❖❖

उद्वेलन

विद्या तिवारी

गोविन्द तुम्हारे चरणों में,
शत बार नमन, शत कोटि नमन।
आ गई तुम्हारे चरणों में,
भव सागर का कर उद्वेलन।
तुमने करुणा कर हाथ गहा,
अरु बाँह पकड़ कर खींच लिया।
अब छूट गया तेरी ममता से,
भव सागर का पुनरावर्तन।
हैं, दीन दुखी जग के प्राणी,
अब सबका प्रभु उद्धार करो।
भर दो सबके हिय भक्ति ज्ञान,
हो जाये सबका परिवर्तन।
अब दुख द्वन्द्व सब दूर करो,
मिल जाये मुक्ती मानव को।
सब भक्ति भरे, जग में विचरें,
कर प्रेम प्रीति का अनुवर्तन।
कामना भोग से हो विरक्ति,
आनन्द सिन्धु स्नान करे।
विद्या सब तेरे में विहरें,
सब पावें तेरा अवलम्बन।

❖❖❖

पूर्ण पुरुष

इन्द्रिरा मोहन

प्रियतम, तुम मुझमें रहते हो।
साँसों में है तुम से हल–चल,
धड़कन आहट देती पल–पल,
चंचल चपल चित्त चिन्तातुर
कहीं नहीं पाता है, सम्बल।
बिन बोले, सब कुछ कहते हो।

तन का खोल चढ़ा है, मन पर,
बुद्धि विलसती भीतर–भीतर,
जो असत्य की नाहर क्रीड़ा–
जान रहे सच, तुम छिप–छिपकर।
दर्प, अहम् सब कुछ सहते हो।

तुमसे गति तुमसे ही धृति है,
कुमति कुटिल तुमसे ही मति है।
प्रेम, प्रणय प्रतिशोध तुम्हीं हो–
पूर्ण पुरुष तुमसे संस्कृति है।
कलिमल, कपट, कलुष दहते हो।

शबरी तुमको समझ न पाई,
तुम राधा के कुँवर कन्हाई,
उसने पाया तुम्हें हृदय से,
जिसने तुमसे लगन लगाई।
भाव–अभाव सहज गहते हो।

❖❖❖

मत बनाओ.....गाँव को अपना निशान

डॉ, नलिनी पुरोहित

रहने दो
गज भर जमीन,
रहने दो
माटी के घेरे,
रहने दो खुले सपने
थोड़े तेरे–थोड़े मेरे।
मत बाँधों–सौंधी महक
मत बाँधो
पगडंडी के घेरे।

कहाँ मिलेगा–
फिर खुला दालान
अतृप्त नयन
पायेंगे कहाँ–खुला आसमान
मतवाली बारिश
किन प्रेमी–युगलों का करायेगी स्नान
यौवन की धड़कन
कहाँ दौड़ पायेगी विश्राम।
उड़ते पक्षी थके हारे।

कहाँ पायेंगे अपने निशान,
छोड़ दो थोड़ी जमीन।
मत बनाओ.....
गाँवों को अपना निशान,
हरियाली में सजी वसुंधरा का
मत करो चिर विराम
मत बसाओ शहर को गाँवों में
बसने दो उसे अपनी अस्मिता की
सुदृढ़ बाहों में।

❖❖❖

रश्मि-पत्रों पर

निर्मला जोशी

रश्मि पत्रों पर शपथ ले मैं यही कह रही हूँ,
चाहते हो, लो परीक्षा, मैं स्वयं इम्तहान हूँ।

हूँ, पवन का मस्त झोंका
पर तुम्हें ना भूल पाई।
इसलिए यह भोर संध्या
गीत बनकर मुझको गाई।

कंटकों की राह पर चलती रही हैरान हूँ,
क्यों मचलती हूँ, समंदर के लिए हैरान हूँ।

शून्य में कुछ खोजती हूँ
पर मिलन का विश्वास है,
इस शहर में है सभी कुछ
मन में मेरे सन्यास है।

आँसुओं का कोष संचित है बड़ी धनवान हूँ,
पर नदी के साथ बहकर तृप्ति से अनजान हूँ।

तुम रहो बादल घनेरे
मैं तो सरस बरसात हूँ,
देख पाती जल सतह ना
हँसती हुई जलजात हूँ।

तुम भले समझो न समझो आज तक मैं मौन हूँ,
कल चिरंतन प्रश्न का उत्तर यही पहचान हूँ।

❖❖❖

जय जवान, जय किसान

डॉ. गणेश दत्त सारस्वत

जय जवान, जय किसान।
सुख–समृद्धि मूर्तिमान।

भव्य समुन्नत ललाट,
शुद्ध–बुद्ध जन विराट।
खुल गये कि नेत्र बन्द,
मुक्त, मुक्ति के कपाट।

राष्ट्र का नया विहान।
लोकतंत्र है, महान।

देश का अखण्ड रूप,
ऋद्धि–सिद्धि का स्वरूप।
श्रम फलित शमित द्विधा,
समादृता धरा अनूप।

भिन्न तन, अभिन्न प्राण।
भारतीय है, प्रणाम।

स्वयं सिद्ध भाव–लोक,
विगत राग–द्वेष–शोक।
मुग्ध मन प्रफुल्ल काय,
शस्य श्यामला विलोक।

गँज रहा राष्ट्रगान।
जयति देश छवि–निधान।

❖❖❖

शहीदों की याद में

धनंजय अवस्थी

देश के लिए जिये, मरे उन्हें प्रणाम है,
हो गये शहीद जो उन्हीं का आज का नाम है।
देशभक्त लक्ष्मी अबाध जूझती रही,
कह गये ज़फ़र कि वतन भूलता कभी नहीं।

खाके वतन बेमिशाल आखिरी पयाम है।
हो गये शहीद जो उन्हीं का आज नाम है।
याद हैं सुभाष की अजर–अमर कहानियाँ,
भूलती नहीं पटेल, भगत की निशानियाँ।

मुल्क की इबादतें लिये अबुल कलाम हैं।
हो गये शहीद जो उन्हीं का आज नाम है।
मौत से डरे न ये, न पंथ से डिगे कभी,
बाँध सर कफ़न चले न लक्ष्य से हटे कभी ।

मातृभूमि का यही सियासती इनाम है।
हो गये शहीद जो उन्हीं का आज नाम है।
भूख–प्यास झेल–झेल जुल्म जेल में सहे,
प्राण की लगा के बाजियाँ अदीब हँस रहे।

और दे गये हमें स्वतंत्रता का जाम है।
हो गये शहीद जो उन्हीं का आज नाम है।
देश के लिए महात्मा, शहीद हो गये,
गोलियों की चोट खाके इंदिरा यही कहें।

मुल्क से बड़ा न और कोई देवधाम है।
हो गये शहीद जो उन्हीं का आज नाम है।

❖❖❖

असर देखता हूँ

पं0 प्रवीण त्रिपाठी

मैं जब भी पलट कर इधर देखता हूँ,
वो टूटा हुआ अपना घर देखता हूँ।
वो बारिश के मौसम में छप्पर टपकना,
वो आँगन में छानी का आ कर लटकना।
वो कच्ची दीवारों का बह कर के आना,
कब होगी नयी ये सहर देखता हूँ।
वो जेठों का तपना और लू के थपेड़े,
कहीं घर के कोनों में बच्चों के डेरे।
हवाओं का वो धूल भर–भर के आना,
गरीबी का खुद पर असर देखता हूँ।
वो झीने से परदों में अस्मत छुपाना,
पुआलों में रहकर के सर्दी बचाना।
ये मौसम गरीबी का बारह महीने,
कब होगी कड़ी दोपहर देखता हूँ।

मुस्कुराते हैं

उनकी आँखों में नजर आतें है,
उनके होंठों में मुस्कुरातें हैं।

उनकी हस्ती में अपनी हस्ती है,
उनके अश्कों में झिलमिलातें हैं।

उनकी सरगम में यार पंचम हैं,
उनकी साँसों में आते, जाते हैं।

❖❖❖

श्रीशंकर

महेश प्रसाद पाण्डेय

रहते उपकार में लीन सदा,
दुखी–दीन का हाथ गहा करते हो।
सुख देकर के हर मानव को,
दुख आप अनेक सहा करते हो।
रखते धन–धाम का ध्यान नहीं,
गिरि कानन में ही रहा करते हो।
कर अक्ष की माल 'महेश' लिये,
नित राम ही राम कहा करते हो।

करने को विवाह चले उमा से,
तव रूप विलोक सभी जन भागे।
पल में चले काम के प्राण गये,
जब तीसरा लोचन खोल के जागे।
मिल पाये जिसे न तुम्हारी कृपा,
सच में वे अवश्य हैं लोग अभागे।
किसकी है मजाल भला कहिये,
सकता रूक कौन 'महेश' के आगे।।

बँध के न रहे सभी बंधनों में,
निज ढंग के मस्त निराले बने।
करते मनमानी रहे अपनी,
उजले उर के नहीं काले बने।
किया प्राप्त सदा सुख को दुख में,
सच बात को बोलने वाले बने।
बन तो गये जीजा 'महेश' परन्तु,
नहीं किसी के कभी साले बने।

❖❖❖

अजात सम्बोधन

निर्मल शुक्ल

राम करेंगे, फिर बहुरेंगे–
सम्मोहन गतिमान के।

बहुत संकुचित हुईं हवाएँ
अब सागर
फिर मथा जाएगा,
लहरों के अनहद निबंध की
देवालय
फिर कथा गाएगा।
फिर फूटेंगे, अँखुवे जल में
संप्रति जीवन प्राण के।

अब फिर कोई
सुधा षोडशी
भटकावा लेकर आयेगी,
संबंधों के कोलाहल को
लम्बी साँसें
दे जाएगी।
तरल बनेंगी, गरल वीथियाँ
पीकर सत्व निदान के।

अभियोजन की
ललित कामना
एक सुपरिचित युग लायेगी,
फिर नैतिक शैली चिन्तन की
सृजनशीलता
दोहरायेगी।
फिर अजात होंगे सम्बोधन
टूटन और थकान के।

❖❖❖

शहीदों के नाम

अशोक कुमार पाण्डेय 'अनहद'

जो शहीदे वतन हो रखे लाज हैं,
जिनकी कुर्बानियों पर हमें नाज है।
दिये बलिदान जो देश हित में सदा,
उन चरण में हुआ शीश नत आज है।

देश रक्षार्थ तुमने नहीं क्या सहा,
शूरवीरों ये अपना भी वादा रहा।
देश के शत्रुओं को न छोड़ेगे हम,
काल उनके लिए हम बनेंगे महा।

देश का हेतु, लेकर चले हैं बिदा,
सुत–पिता, मातु, पत्नी सभी से जुदा।
आखिरी श्वाँस तक जो निडर हो लड़े,
और फिर कह गये अलबिदा–अलबिदा।

राह ऐसी चले तुम अमर धाम को,
वीरता की गली शौर्य के ग्राम को।
और तुमसा हुआ है न जीवन सफल,
धन्य तुम कर गये जो स्वयं नाम को।

जब तलक सूर्य, शशि और है ये धरा,
नाम जग से नहीं मिट सकेगा जरा।
अनुसरण अब करेगा तुम्हारा जगत,
गर्व–अनुभूति का, नीर नैनों भरा।

❖❖❖

गीत मैं किसको सुनाऊँ

वीरपाल सिंह निश्छल

कर रहा मन गीत गाने, गीत मैं किसको सुनाऊँ,
आ गया फागुन महीना, गीत होली के मैं गाऊँ।
नाचती सब दीखती हैं, बज रहे ढप, ढोल, तबला,
वृद्ध भी हैं, प्रौढ़ भी हैं, हैं, अरी अधिसंख्य नवला,
हो रहा रोमांच तन में, कान में किसको बताऊँ।
कर रहा.....सुनाऊँ?

लहलहाती खेत सरसों, साल महुआ, आम्रपाली,
कोकिला पिय–पिय, पुकारे, देहरी मैंने सजाली।
आओ हे पतिदेव अब घर, राह में पलकें बिछाऊँ।
कर रहा.....सुनाऊँ?

आसरा है आपका घर, आपका है आप आओ,
फूल केशू केश–गजरा चूड़ियाँ अब खनखनाओ।
हाथ में मेंहदी रचाकर, पैर में महावर लगाऊँ।
कर रहा.....सुनाऊँ?

पक चुके हैं बेर बैरी, झूमती हैं बालियाँ भी,
खिल रहे हैं बाग बालक, फूल और फुलवारियाँ भी।
हँस रहे हैं फूल 'निश्छल' नीर तुलसी को पिलाऊँ।
कर रहा.....सुनाऊँ?

❖❖❖

त्रासदी

अखिलेश निगम

पर्वत पुरुष के वक्षस्थल पर फैली हुई,
मखमली घास,
आज क्यूँ उदास,
मुरझाई–सी, कुछ सकुचाई–सी,
विवश पीत वसना, अनवरत् अश्रु निमग्ना।
झूलते सागौन, देवदार,
सामाजिक, साँस्कृतिक मूल्यों के पहरेदार,
पर आत्मसमर्पण कर डाल रहे हथियार।
अनवरत् चल रही कुल्हाड़ियाँ,
शेष केवल झाड़ियाँ।
हो रहीं नदियाँ नग्न,
नग्न होते पर्वत शिखर।
कैसी है यह विडम्बना,
कैसा है यह जहर?
अन्तस्तल से प्रवाहित जल–प्रपात,
क्षीणकाय, मद्धिम करता करुण आघात।
अश्रुपूरित नयन,
क्षण–प्रतिक्षण झुलसते चमन।
पर्वत पुरुष के कण्ठहार नदी और झरने,
अस्मिता की तलाश में, शायद कुछ और आस में,
निरन्तर विघटित।
काश हम समझ पाते, कुछ तो शरमाते।
एकान्तिक, वैयक्तिक, कुरूप और
शापित पहाड़।
पुष्ट मांसलता की जगह
झाड़ और झंखाड़।
कर रहे करुण रोदन,
इस आस में कि–
कोई तो करे अनुमोदन।
आखिर, कोई तो करे अनुमोदन।

❖❖❖

दिल

हीरा लाल

बन्द कीजिए जान लेवा धमाकों के खेल,
जान जाये न जाये दिल दहलता है, ज़रूर।

दिल ही तो है वजूदे–ज़िन्दगी की बुनियाद,
फिक्र ज़िन्दगी की, यही दिल करता है, ज़रूर।

आये मज़ा जीने में खेल ऐसे खेलिये,
खुशी के लिए सबका दिल मचलता है, ज़रूर।

सहमी, सहमी फिजां में मायूस है, समां भी,
एहसासे–दहशत में दिल धड़कता है, ज़रूर।

कितनी ही मिले हमदर्दी, कितने हों दिलासे,
दिल के लुट जाने पर दिल सिसकता है, ज़रूर।

लगने न पाये ज़िन्दगी में नफरत की आग,
भले न भड़के शोले, दिल सुलगता है, ज़रूर।

❖❖❖

आज का दिन

महेश आलोक

आज का दिन मैं अपनी तरह गुजारूँगा,
कुमार गन्धर्व का बीस वर्ष पुराना कैसेट सुनूँगा।
इस तरह कि बीस वर्ष पहले गाया भजन मुझे,
आठ वर्ष की आयु में सुना हुआ लगे।
अगर यह तरीका सफल हुआ तो मजा ही कुछ दूसरा होगा।
अपने जन्म से पूर्व स्वर्गवासी हुए गायकों को
सुनने का।
अगर नहीं आयी घर से चिट्ठी तो उदास नहीं होऊँगा।
किसी पुरानी चिट्ठी में नयी तारीख डालूँगा।
और नयी चिट्ठी की तरह पढ़ूँगा,
हाँलाकि कोई नियम नहीं है हँसने का ऐसे समय फिर भी
ठठाकर हँसूगा।
इतना लगभग बित्ताभर अवकाश कहाँ मिलता है कि
हँसा जा सके खुद पर,
अखबार में छपे शब्दों से कहूँगा कि अगर रख सकें तो रख लें
दो मिनट का मौन अपने चरित्र पर।
कि वे किसी भी क्षण घोषित किये जा सकते हैं, साम्प्रदायिक,
उन्हें यह कहने की छूट हरगिज नहीं दूँगा कि कवि
अपनी नागरिकता का शुल्क
नहीं अदा कर रहे हैं।
लगभग इसी क्रम में किसी भी गर्म पेय को
मसलन चाय को ही यह सलाह देना गलत नहीं समझूँगा।
कि अगर पी सके तो पिये मेरी गरमायी को,
और तुलनात्मक अध्ययन करे अपनी गरमाहट से,
जो कृत्रिम है।
घड़ी देखने का तो सवाल ही पैदा नहीं होता,
सिर्फ घड़ी को पता है मृत्यु का अन्तिम सच और समय।
फिर नेत्र–व्यायाम की किस किताब में लिखा है,
कि घड़ी देखने से आँख की ज्योति बढ़ती है।
सच मानिये मैं दैनिक चर्या की धज्जियाँ उड़ाऊँगा,
आज का दिन मैं अपनी तरह गुजारूँगा।
आखिर मैं भी आदमी हूँ।

❖❖❖

ज्योति-शिखा

अवधेन्द्र प्रताप सिंह

माना,
दुनिया की निगाहों में
लोगों के ख़यालों में
आत्मा की अदालत में
मैं वाकई
एक गुनहगार हूँ
कारण है कि मैंने
बहुतों का जलाया
फिर———
बुझाया–मिटाया
पर———
तुम्हारे दिल के आँगन में
आंखों की———
ठंडी–नशीली छांव में
अधरों की तपती धूप में
'मैं'
किसी देवता के मन्दिर में
मानो———
अप्रतिहत प्रज्ज्वलित
एक पवित्र ज्योति–शिखा हूँ
जिसने अपने देवता की
प्रतीक्षा में
शाश्वत———
जलना–तड़पना और तड़पते ही रहना
अपना———
धर्म–कर्तव्य–नियति माना

❖❖❖

भर हृदय में प्यार पावन मानव को हंसाओ।

विष्णु कुमार शर्मा

शक्ति का भंडार तुम में है युवाओं।
स्वर्ग सी धरती बनाओ, स्वर्ग सी धरती बनाओ।।

क्रान्तियां तुमने मचायीं, विश्व का इतिहास बदला।
शक्तियां तुमने लगाकर, विश्व का दुख–त्रास बदला।
है जरूरत आज फिर से, प्रतिभा दिखाओ।।
स्वर्ग सी धरती बनाओ, स्वर्ग सी धरती बनाओ।।

है सृजन स्वीकार तो, आगे बढ़ो–आगे बढ़ो।
संगठित ऊर्जा लगाकर, शुभ सृजन के पथ चढ़ो।
हो विकलता दूर जिससे, वह कला–कौशल दिखाओ।
स्वर्ग सी धरती बनाओ, स्वर्ग सी धरती बनाओ।।

अब जरूरत त्याग की, और शुचि बलिदान की है।
श्रेष्ठ चिन्तन से सुशोभित, लोकहित अनुदान की है।
भर हृदय में प्यार पावन, मानव को हँसाओ।
स्वर्ग सी धरती बनाओ, स्वर्ग सी धरती बनाओ।।

सूक्ष्म से सम्बल मिलेगा, मत डरो आगे बढ़ो।
श्रेष्ठता के हित समर्पित, तन–मन करो युवकों! बढ़ो।
पुण्य व परमार्थ में निज, जीवन लगाओ।।
स्वर्ग सी धरती बनाओ, स्वर्ग सी धरती बनाओ।।

❖❖❖

यूँ सारा जीवन बीत गया

जिओ लाल जैन

उलझनें ही सुलझाने में
सारा जीवन बीत गया,
साँसों के आने–जाने में ही
हो सफर तमाम गया।

आलोकित था मेरा जीवन
दीपक का कोई मोल नहीं था
फूलों भरे सपनों को मेरे,
झंझा से कोई द्वेष नहीं था।
दिनकर के आते–आते
सारा सपना रीत गया।

उलझनें ही सुलझाने में
सारा जीवन बीत गया।

सुख के चारो ओर फैला है,
चिर परिचित शूलों का सारा।
सुख ने जब द्वार बन्द किये,
दुःखों ने सारे खोल दिये।
संगीत भरा मेरा जीवन,
पलक सिन्धु में डूब गया।

उलझने ही सुलझाने में,
सारा जीवन बीत गया।

❖❖❖

भवानी प्रसाद मिश्र

जन्म- 29 मार्च 1913 निधन- 20 फरवरी 1985

मुझे कोई हवा पुकार रही है–
कि घर के बाहर निकलो
तुम्हारे बाहर आये बिना,
एक समूची जाति, एक समूची संस्कृति
हार रही है।
मुझे कोई हवा पुकार रही है।
सोचता हूँ सुनने की शक्ति बची है,
तो चल पड़ने की भी मिल जाएगी।
अकेला भी निकल पड़ा पुकार कर,
तो धरती हिल जाएगी।

सृजन स्मरण

बंशीधर शुक्ला

जन्म- 1904 निधन- 1980

बहुत प्यारे बन्धनों को आज झटका लग रहा है,
टूट जायेंगे कि मुझ को आज खटका लग रहा है।
आज आशाएँ कभी भी चूर होने जा रही हैं,
और कलियाँ बिन खिले कुछ चूर होने जा रही हैं।
बिना इच्छा, मन बिना,
आज हर बंधन बिना,
इस दिशा से उस दिशा तक छूटने का सुख,
टूटने का सुख।
शरद का बादल कि जैसे उड़ चले रसहीन कोई,
किसी को आशा नहीं जिससे कि सो यशहीन कोई।
नील नभ में सिर्फ उड़ कर बिखर जाना भाग जिसका,
अस्त होने के क्षणों में है कि हाय सुहाग जिस का।